ECONSPEAK: A Journal of Advances in Management IT & Social Sciences,
Vol. 16, Issue 4, April 2026 Impact Factor 8.059 ISSN: (2231-4571)
www.skirec.org Email Id: skirec.org@gmail.com

1946 में अन्तरिम सरकार के गठन के सम्बन्ध में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

Narendra Kumar Sehra
Assistant Professor
Department of History
Govt. Degree College Agra Cantt, Agra

भारत में 1946 मे गठित प्रथम अन्तरमि सरकार अक्समात अस्तित्व में नही आई वरन् इसके पीछे एक लम्बा क्रान्तिकारी संविधानिक विकास भी था। ब्रिटिश सरकार ने यह संवैधानिक सरकार किसी उपहार में नही दी थी वरन् भारतीयों की अनवरत समय से चली आ रही संवैधानिक लड़ाई का प्रतिफल थी। इस सरकार में तत्कालीन समय के उत्कृष्ट विभूतियां सम्मलित थी जो इस तथ्य की पुष्टि करती है ''कि भारत भारतीयों के लिये है।'' तथा भारतीय आदि काल से स्वशासन करने के आदि रहे है भले ही यह सरकार ब्रिटिश प्रवधानों व ब्रिटिश सरकार के सहयोग से बनी किन्तु कालान्तर में इसमें भरत में एक स्वस्थ राजनैतिक प्रणाली की नींव रखी। इस सरकार के अस्तित्व में आने के लिए विभिन्न अधिनियम व संघर्ष जिम्मेदार रहे है।

अगस्त घोषणा के बाद मांटेग्यू के साथ एक दल राजनीतिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए भारत आया। इसके अध्ययन के आधार पर जुलाई 1918 में ''मॉटेग्यू–चैम्सफोर्ड रिपोर्ट'' प्रकाशित की गयी। यही रिपोर्ट 1919 के भारतीय शासन अधिनियम का आधार बनी इसी के आधार पर ब्रिटिश संसद ने 1919 में भारत के औपनिवेशिक प्रशासन के लिए एक नया शासन–विधान बनाया जो 1921 में कार्यान्वित किया गया।

1919 का भारतीय शासन अधिनियम हमारे संवैधानिक विकास में एक नए दौर के आरंम्भ का सूचक था जिसकी विशेषता थी उत्तरदायी शासन की प्रगति। इस अधिनियम की प्रस्तावना में 20 अगस्त 1917 की घोषणा के मूल सिद्धान्तों का समावेश था। प्रस्तावना में निम्नलिखित बातें स्पष्ट कर दी गयी थी।

1. प्रशासन में भारतीयों का संपर्क बढ़ाया जाएगा।
2. भारतीय ब्रिटिश साम्राज्य का अभिन्न अंग बना रहेगा।
3. स्वशासन की संस्थाओं का विकास किया जायेगा।
4. भारत मे ब्रिटिश नीति का लक्ष्य उत्तरदायी शासन की स्थापना होगा।
5. उत्तरदायी शासन और स्वशासन की संस्थाओं की स्थापना का काम धीरे–धीरे और क्रमिक ढंग से होगा।
6. कब कितनी प्रगति हो इसका निर्णय ब्रिटिश संसद के ही साथ मे रहेगा। दूसरे शब्दों मे भारतीय लोगों के कल्याण एवं प्रगति की जिम्मेदारी ब्रिटिश संसद की ही होगी।
7. इन मामलों में संसद का कार्य उस सहयोग द्वारा निर्धारित होता था जो उन लोगों से मिलता था जिन्हें सेवा के नये अवसर प्रदान किये गये थे।

इस प्रस्तावना का मूल उद्देश्य यह था कि जो भी घोषणा मॉटेम्यू ने की थी उसे अब एक वैधानिक रूप दे दिया गया था अंग्रेजी सरकार का भारत पर नियंत्रण स्पष्ट कर दिया गया और यह भी सपष्ट हो गया। कि भविष्य में किस दिशा में कैसे जाना है।

1919 के अधिनियम की मुख्य धाराएँः–

यह सरकार मे परिवर्तन – 1793 से भारत राज्य सचिव की भारतीय राजस्व से वेतन मिलता था वह अब अंग्रेजी राजस्व से मिलना था। उसके कुछ कार्य उससे लेकर एक नये पदाधिकारी भारतीय उच्च आयुक्त जिसको भारतीय राजस्व से वेतन मिलना था उसको दे दिये गये। यह उच्च आयुक्त अब सपरिषद गवर्नर जनरल का कार्यकर्ता बन गया। उसे अब संग्रहगार विभाग तथा भारतीय विद्यार्थी विभाग इत्यादि का कार्यवाहक बना दिया गया। प्रानतों मे हस्तान्तरित विषयों पर भारत राज्य सचिव का नियन्त्रण कम हो गया यद्यपि केन्द्र पर उसका नियन्त्रण बना रहा।

इस अधिनिम के द्वारा ही गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी में 8 सदस्यों में से 3 भारतीय निकट किये गये उन्हें विधि, शिक्षा, श्रम, स्वास्थ्य तथा उद्योग विभाग इत्यादि निकट किये गये। प्रमुख कार्यकारी शक्तियाँ अभी भी गवर्नर जनरल के पास रही जो क्राउन के प्रतिनिधि भारत सचिव के साथ लगातार पत्र–व्यवहार करता था। उसे अपने पार्षदों पर पूरा नियंन्त्रण था अर्थात् उसकी शक्ति में कोई भी कमी नही की गई।

इस अधिनियम के द्वारा ही सदनीय व्यवस्था स्थापित हो गई। एक सदन राज्य परिषद और दूसरा सदन केन्द्रीय विधान सभा था।

दोहरे शासन की स्थापनाः–

इस अधिनियम का सब से महत्वपूर्ण भाग प्रान्तों में दोहरे शासन का आरम्भ करना था। इस योजना के अन्तर्गत शासन के विषयों को प्रान्तीय तथा केन्द्रीय सूचियों में वॉट दिया गया जो इस अधिनियम के अन्तर्गत बनाए गए विकेन्द्रीकरण नियमों द्वारा किया गया केन्द्रीय विषय थे– रक्षा, विदेशी मामले, टंकण तथा मुद्रा, आयात–निर्यात कर इत्यादि जहाँ एक ही प्रकार के कानून होने चाहिये थे तथा एक ही प्रकार के कानून होने चाहिये तथा प्रशासन स्थानीय स्वशासन शिक्षा, चिकित्सा प्रशासन और कृषि इत्यादि जहाँ अपनी आवश्यकताओ के अनुसार परिवर्तन आवश्यक थें।''

प्रान्ती सूची को फिर दो भागों मे बाँटा गया। हस्तान्तरित विषय (जैसा कि स्थानीय स्व ाासन, शिक्षा, अस्पताल, उद्योग और सिक्ख, यूरोपीय, भारतीय ईसाई तथा ऐग्लोइण्डियन लोंगो को पृथक प्रतिनिधित्व मिला।

गवर्नर जो प्रान्त के प्रशासन का मुखिया था, उसे इस नई व्यवस्था में मुख्य भूमिका निभानी थी। आरक्षित विषयों में वह गवर्नर–जनरल अथवा भारत राज्य सचिव के प्रति उत्तरदायी था परन्तु हस्तान्तरित विषयों मे भी वह संवैधानिक मुख्या नही था अपतु उसे प्रान्त की रक्षा, शन्ति पिछड़े वर्गो की उन्नति, अल्पसंख्यक लोगों, लोक सेवाओं इत्यादि के हितों की रक्षा के लिये मंत्रियों के सुझावों के विरूद्ध कार्य करने का अधिकार था। वह किसी भी विधेयक को रोक सकता था तथा अस्वीकृत विधेयक को प्रमाणित कर सकता था तथा अध्यादेश जारी कर सकता था, विधान मण्डल को भंग कर सकता था अथवा उसे

एक वर्ष के लिये बड़ा सकता था। यदि संवैधानिक व्यवस्था टूट जाए तो वह समस्त प्रशासन अपने हाथ में ले सकता था अर्थात हस्तान्तरित विभागों को भी आरक्षित विभागों की तरह मान सकता था।

केन्द्र मे परिवर्तनः–

केन्द्र में सरकार पहले की तरह निरंकुश रूप से चलती रही और सिद्धान्त रूप से वह केवल अंग्रेजी संसद के प्रति ही उत्तरदायी थी।

केन्द्र मे विधान मण्डल के विस्तार के लिए द्विसदनीय व्यवस्था स्थापित की गयी। उपरिसदन, राज्य परिषद कहलाता था जो पांच वर्ष के लिए होता था और उसके 60 सदस्यों में से 34 निर्वाचित होते थे और 26 मनोनीत। मातधिकार बहुत ही सीमित था। नीचे का सदन विधान सभा कहलाता था। उसके 145 सदस्यों में से 104 निर्वाचित तथा 41 मनोनीत होते थे। मताधिकार के लिए अधिक सम्पत्ति आयकर, भूमिकर इत्यदि की सीमाऐं निश्चित की गयी। यद्यपि ये उतनी कड़ी नही थी जितनी राज्य परिषद के लिए। स्त्रियों को सभा के लिए मताधिकार दिया गया। यह सभा 3 वर्ष के लिए होती थी।

केन्द्रीय कार्यकारिणी के लिए कोई विशेष परिवर्तन नही सुझाये गये। गवर्नर जनरल की शक्तियाँ बढ़ा दी गयी। पहली बार वह कटौतियों का पुनः स्थापन कर सकता था, विधेयकों को प्रमाणित कर सकता था। और अध्यादेश जारी कर सकता था तथापि कार्यकारिणी की सदस्य संख्या 8 कर दी गयी जिसमें से उभारतीय होते थे।

दुर्भाग्य से इस ऐक्ट को सहकारिता से कार्यान्वित करने का प्रयत्न नहीं किया गया आरम्भ से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसे निराशाजनक तथा असंतोषप्रद की संज्ञा दी। उन्होंने कहा कि प्रान्तों में दोहरा शासन तभी सहन किया जा सकता है यदि केन्द्र में भी इसे लागू किया जाए। कांग्रेस ने यह भी गारन्टी मांगी कि पूर्ण स्वायत शासन 15 वर्षो में लागू किया जायेगा। गारन्टी न मिलने पर कांग्रेस ने 1920 में अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन आरम्भ कर दिया। 1923 में कांग्रेस दल ने चुनावों में भाग लिया ताकि संविधान को विधानमण्डलों के अन्दर से तोड़ा जाए।

फिर भी पहले निर्वाचन 1920 मे हुए और दोहरा शासन 1921 से 1937 तक 9 प्रान्तों में चलता रहा, केल बंगाल में 1924 से 1927 और मध्यप्रान्त में 1924 से 1926 तक निलम्बित रहा।

यह ठीक है दोहरा शासन भद्दा भ्रमण तथा जटिल थ ओर इसका असफल होना निश्चित था परन्तु इस प्रयोग को सर्वथ निष्फल नहीं कह सकते। लोकप्रिय मंन्त्रियों ने स्थानीय निकायों शिया तथा समाज सुधारों की ओर ध्यान दिया। 1922 का बिहार और उड़ीसा ग्राम प्रशासन ऐक्ट, बम्बई स्थानीय बोर्ड एक्ट (1923), मद्रास उद्योग–धन्धों का राजकीय सहायता ऐक्अ (1923) तथा मद्रास धार्मिक संस्थान ऐक्ट (1926), इत्यादि विशेष रूप से उल्लेखनीय है। परन्तु सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि अंग्रेजो का यह कथन कि भारतीय स्वशासन के योग्य नहीं असत्य सिद्ध हो गया। यह संवैधानिक अनुभव उनके लिए बहुत ही लाभप्रद तथा प्रोत्साहन देने वाला था।

सइमन आयोग (1927–30)–

ब्रिटिश सरकार ने 1919 के ऐक्ट के पारित करते समय यह घोषणा की थी कि वे दस वर्ष के पश्चात इन सुधारों की समीक्षा करेंगे। परन्तु उन्होने नम्बर 1927 में ही एक आयोग, सर साइमन की अध्यक्षता में इसकी समीक्षा के लिए नियुक्त कर

दिया और इस प्रकार यह स्वीकार कर लिया कि 1919 के सुधार असफल रहे है। कुछ लोगों का विचार है कि यह शीघ्रता कांग्रेस के आन्दोलन` कारण हुई और दूसरी ओर यह विचार है कि लार्ड बिरकिनहैड का रूढ़िवादी दल यह नही चाहता था कि यह आयोग उदारवादी सरकार जो सम्भवतः नए चुनाव में सत्तारूढ़ होगी, बनाए।

साइमन आयोग की रिपोर्ट जो 1930 में प्रकाशित की गयी उसने सुझाव था कि

1. प्रान्तीय क्षेत्र मे विधि तथा व्यवस्था सहित सभी क्षेत्रों में उत्तरदायी सरकार गठित की जाए।
2. केन्द्र में उत्तरदायी सरकार के गठन का अभी समय ही आया।
3. केन्द्रीय विधान मण्डल को पुर्नगठित किया जाए जिसमें एक इकाई की भावना को छोड़कर संघीय भावना हो और इसके परोक्ष पद्धति से प्रान्तीय विधान मण्डलों द्वारा चुने जाऐ।

1928 की नेहरू रिपोर्टः–

सभी राजनीतिक दलो के सर्वदलीय कान्फ्रेस बुलाई। पण्डित मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में नियुक्त एक कमेटी ने भारतीय संविधान का सर्व अनुमोदि रूप प्रस्तुत किया। नेहरू कमेटी की रिपोर्ट ने सुझाव दिया कि शरारतभी साम्प्रदायिक चुनवा पद्धति त्याग दी जाए ताकि उसके स्थान पर अल्पसंख्यकों के लिए उनकी जनसंख्या के आधार पर स्थान आरक्षित कर दिये जाऐं। इसने समस्त भारत के लिए एक इकाई वाला संविधान प्रस्तुत किया जिसके द्वारा भारत को केनद्र तथा प्रान्तों मे पूर्ण प्रादेशिक स्वायत्तता मिले। मुस्लिम लीग ने जिन्नाह द्वारा प्रस्तुत 14 संकत में अपने आरक्षण प्रस्तुत किये।

लार्ड अर्विन की डोमिनियन स्टेटस के विषय में घोषणा, 1929:–

अक्टूबर 1929 में लार्ड डार्विन ने रेम्जे मैक्डानल्ड की नव गठित श्रमिक सरकार से मंत्रणा करने के पश्चात् यह घोषणा की कि भारत की उन्नति का अन्तिम चरण 'डोमिनियन स्टेटस' प्राप्त करना है। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी घोषणा की कि अंग्रेजी सरकार ने यह निश्चय किया है कि साइमन आयोग की रिपोर्ट की इंग्लैण्ड में एक गोल मेज कान्फ्रेंस में विवेचना की जाएगी जिसमें अंग्रेजी सरकार, भारतीय अंग्रेजी प्रवेश तथा भारतीय रियासतों के प्रतिनिधि भाग लेंगे।

गोलमेज कान्फ्रेंस (1930–32):–

गोल मेज कान्फ्रेंस ने अपने अधिवेशन लन्दन में 1930–31 तथा 1932 में किये। कांग्रेस जिसने सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया हुआ था, की ओर से केवल दूसरे अधिवेशन में ही महात्मा गांधी भाग ले सके। इस कान्फ्रेंस मे मुख्य रूप से जिन मुद्दो पर सहमति हो सकी वे थे (अ) भारत की नई सरकार का रूप अखिल भारतीय संघ होना चाहिए। (ब) संघीय सरकार, कुछ आरक्षणों के साथ, संघीय विधान मण्डलों के प्रति उत्तरदायी हो, (स) यदि भारतीय साम्प्रदायिक निर्णय दे दिया, जिसके अनुसार प्रानतीय तथा केन्द्रीय विधान मण्डलों में सीटों का विभाजन साम्प्रदायिक अनुपात से करने का प्रयत्न किया गया। सबसे प्रमुख बात यह थी कि अनुसूचित जातियों को भी भिन्न सम्प्रदाय मान कर आरक्षित स्थान दिये गये। महात्मा गांधी ने इस अन्याय को रद्द करवाने हेतु मरणव्रत रखा और अन्त में पूना समझौता के अनुसार इसको थोड़ा सा पतिवर्तित कर दिया गया।

इस अधिनियम के लाए मसविदों के सहायता ली गयी।

(क) साइमन आयोग रिपोर्ट

(ख) सर्वदलीय कान्फ्रेन्स (नेहरू समिति) रिपोर्ट

(ग) तीनों गोलमेजों कान्फ्रेंस में हुए वादविवाद

(घ) श्वेत पत्र

(ड़) संयुक्त प्रवर समिति रिपोर्ट

(च) लोथिया रिपोर्ट जिसमें चुनाव सम्बन्धी प्रावधानों का विवरण था।

भारत सरकार अधिनियम 1935:–

1919 में यह प्रवधान था कि राजनैतिक परिस्थिति का प्रत्येक दस वर्ष के पश्चात पुनरावलोकन किया जाए। 1927 में ही यह प्रक्रिया आरम्भ कर दी गयी और सर्वश्वेत साइमन आयोग नियुक्त किया गया। सर्वदलीय कान्फ्रेंस ने नेहरू रिपोर्ट ओर तीन गोलमेज कान्फ्रेंसों और अंग्रेजी सरकार द्वारा प्रस्तुत श्वेतपत्र ये सभी 1935 के भारत सरकार अधिनियम का आधार बन गए।

प्रान्तीय स्वायतशासन–इस अधिनियम के अन्तर्गत गर्वनरी प्रान्त को एक नई वैधानिक प्रतिष्ठा प्रदान की गयी। मुख्य रूप से वे अब कुछ विषयों को छोड़कर भारत सरकार और राज्य सचिव के नियंत्रण से मुक्त हो गये और उन्हें अब यह शक्ति क्राउन से मिल गयी।

प्रान्तों को दोहरे शासन के स्थान पर सब स्वशासन मिल गया और आरक्षित और हस्तान्तरित विषयों में भेद समाप्त हो गया। कुछ आरक्षणों सहित वहाँ पूर्ण उत्तरदायी सरकार स्थापित हो गयी। प्रांतीय परिषदों का भी विस्तार हुआ। बम्बई, मद्रास, बंगाल, यू0पी0, बिहार और आसाम में द्विसदनीय व्यवस्था लागू कर दी गयी और शेष पांच मे एक सदनीय। मताधिकार भी विस्तृत कर दिया गया। दुर्भाग्यवश साम्प्रदायिक मतदाता मण्डल और अल्पसंख्यकों को अधिक महत्व देने की परम्परा और बढ़ दी गयी।

गवर्नर प्रान्तीय कार्यकारिणी का मुखिया होता था और उससे आशा की जाती थी कि वह लोकप्रिय मंत्रियों की इच्छा अनुसार कार्य करे। परन्तु 'आरक्षण' और बचाव की संज्ञा के अधीन उन्हें ''व्यक्तिगत निर्णय'' तथा विवेकाधीन शक्तियों का प्रयोग करने का अधिकार दे दिया गया, जैसे कि शांति और व्यवस्था के लिए भय अल्पसंख्यकों के हित और अंग्रेजी व्यापारि हितों की रक्षा इत्यादि। इसके अतिरिक्त गवर्नर को अध्यादेश जारी करने का भी अधिकार दे दिया गया।

भारतीय संघ का प्रस्ताव:–

भारतीय प्रांतों और रियासतों के संघ का भी प्रस्ताव किया गया परन्तु प्रान्तों को इसमे सम्मिलित होना आवश्यक था और रियासतों को वैकल्पिक। परन्तु संघ का अस्तित्व में आना कुछ शर्तो पर ही निर्भर था जो कि पूरी नही हो सकी।

दोहरा शासन जो प्रांतो से समाप्त किया जा रहा था अब संघीय केन्द्र में लाया जाना था। रक्षा विदेशी मामले, धार्मिक मामले और जनजातियों इत्यादि आरक्षित विषय थे जिनका शासन गवर्नर–जनरल 3 कार्यकारी पार्षदों की सहायता से चलाया जाना था और वे उसी के प्रति उत्तरदायी होते थे हस्तान्तरित विभाग, संघीय विधान मण्डल के प्रति उत्तरदायी, लोकप्रिय मंत्रियों द्वारा चलाए जाने थे।

संघीय विधान मण्डल के प्रति उत्तरदायी, लोकप्रिय मंत्रियों द्वारा चलाए जाने थे।

संघीय विधान मण्डल द्विसदनीय था। राज्य परिषद में 156 अंग्रजी प्रांतों के तौर अधिकाधिक 104 देशी रियासतों के प्रतिनिधि होने थे और इसके 33 प्रतिशत सदस्यों को प्रत्येक 3 वर्ष के पश्चात् अवकाश ग्रहण कर लेना था। संघीय विधान सभा में 250 प्रतिनिधि प्रांतों के और अधिकाधिक 125 देशी राज्यों के होने थे। यह सभा 5 वर्ष के लिए होनी थी।

इस संघ में बहुत सी असंगत बातें थी, प्रान्तों को प्रतिनिधि तो चुनाव से आने थे परन्तु रियासतों के राजाओं द्वारा मनोनीत होकर इसके अतिरिक्त रियासतों को जिनकी जनसंख्या केवल 24 प्रतिशत थी निम्न सदन में 33 1/3 प्रतिशत ओर 3 परिसदन में 40 प्रतिशत स्थान दिये गये थे। प्रांतों को भी प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर नहीं अपितु राजनैतिक महत्व के आधार पर ही मिला था। इसी प्रकार यहाँ उपरिसदन को प्राथमिक मतदाताओं द्वारा चुना जाना था और निम्न सदन को अप्रत्यक्ष चुनाव द्वारा। परन्तु सबसे घिनौना पक्ष यह था कि साम्प्रदायिक तथा वर्गीय मतदाता मण्डलों का विस्तार हुआ और अनुसूचित जातियों, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई और ऐग्लो इण्डियन, स्त्रियाँ, व्यापार तथा उद्योग, भूमिपति श्रम, विश्वविद्यालय पिछड़े हुए वर्ग तथा जनजातियों सभी को अलग–अलग प्रतिनिधित्व मिला।

भारतीय संघीय विधान मण्डल को प्रभुसत्ता सम्पन्न विधान मण्डल बनाने को कोई विचार नहीं था। यह भारतीय संविधान में संशोधन नहीं कर सकता था। यह अधिकार केवल ब्रिटिश संसद के पास रहा। इसी प्रकार उसे काननू बनाने के अधिकार भी सीमित थे और लगभग 80 लगभग 80 प्रतिशत बजट अमतापेक्षी था। गवर्नर–जनरल के पास अध्यादेश जारी करने की शक्ति थी और वह विधानमण्डल की शक्तियों को भी कम कर सकता था।

संघ बनाने की योजना को कार्यान्वित नहीं किया जा सका और केन्द्रीय सरकार 1919 के एक्ट की धाराओं के अनुसार ही चलती रही। फिर भी संघीय बैंक ओर संघीय न्यायालय 1935 तथा 1937 में स्थापित कर दिये गये और प्रान्तीय स्वायता पहल अप्रैल 1937 को अस्तितत्व में आई।

यह निरंकुश और उत्तरदायी सरकार की खिचड़ी भारतीय जनता की इच्छाओं के अनुरूप नहीं थी। अंग्रेज साम्राज्यवाद भारत पर अपनी पकड़ ढीली करने उद्यत नहीं था और उसने साम्प्रदायिक तथा प्रतिक्रियावादी तत्वों का सहारा लिया। ये मगर इतने थे कि पंडित नेहरू ने इसे अनेक ब्रेको वाली परन्तु इन्जन रहित मशीन की संज्ञा दी। जिन्ना ने भी इसकी निदा की। एक अन्य सत्याग्रहों की आवश्यकता थी कि अंग्रेजों के हदय में समूल परिवर्तन हो।

सन्दर्भिका

1. ग्रोवर, बी0एल0 यशपाल – आधुनिक भारत का इतिहास, पृ0 सं0 390
2. वही, पृ0 सं0 394
3. डॉ0 सत्या एम0 राय, पृ0 सं0 169
4. Ibid पृ0 सं0 169–71
5. ग्रोवर, बी0एल0 यशपाल – आधुनिक भारत का इतिहास, पृ0 सं0 393
6. Ibid पृ0 सं0 394
7. Ibid पृ0 सं0 397–399
8. ग्रोवर, बी0एल0 यशपाल, पृ0 सं0 400
9. डॉ0 सत्या एम0 राय, पृ0 सं0 176
10. Ibid पृ0 सं0 177

11. ग्रावर, बी0एल0 यशपाल, पृ0 सं0 401

12. डॉ0 सत्या एम0 राय, पृ0 186

13. Ibid पृ0 सं0 187–88

14. ग्रोवर बी0एल0 यशपाल, पृ0 सं0 404

15. Ibid पृ0 सं0 406 – 07